कबीरदास की भक्ति भावना

भक्तिकाल के निर्गुण काव्यधारा के महात्मा कबीर उन संतों एवं भक्तों में से एक हैं, जिन्होंने मध्यकालीन भारतीय जीवन को अत्यंत गहराई से प्रभावित किया है। इन्होने नाथपंथियों की हठयोग साधना में 'भक्ति भावना' का समावेश कर उनकी नीरसता को सरसता में बदल दिया है। भक्त कबीर रामानन्द के शिष्य थे और वैष्णवों के प्रति आदरभाव रखते थे। भक्ति भावना के लिए द्वैत आवश्यक है जो सगुणोपासना में ही संभव है। निर्गुणोपासक तो आत्मा और परमात्मा के अद्वैत पर अधिक बल देते हैं। कबीरदास का यह मानना है कि भक्ति के अभाव में ही मानव 'भव-जल' में डूबता है। भक्ति से भवसागर भी गोपद के समान सुगमता से तरने योग्य हो जाता है —

"भाव भगति हित बोहिया सदगुरु खेवनहार।
अलप उदित तब जानिये जब गोपद खुर विस्तार॥"

कबीर दास की भक्ति भावना को निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से समझा जा सकता है —

1. नाम स्मरण — भक्तों ने प्रभु नाम स्मरण की महत्ता का प्रायः गुणगान किया है। कबीर भी रामनाम की महिमा का बखान करते हैं। वे तो यहाँ तक कहते हैं कि मेरे लिए तो नाम ही खेतीबारी है नाम ही मेरी धन संपत्ति है, नाम जप ही मेरी सेवा पूजा है तथा नाम ही ~~मेरी धन संपत्ति~~ मेरा बन्धु बान्धवत्व है। यथा —

"नांउ मेरी खेती नाउं मेरी बारी। भगति करौं जन सरनि तुम्हारी।
नाउं मेरे माया नाउं मेरी पूंजी। तुमहिं छांडि जानौं नहिं दूजी।
नाउं मेरे सेवा नाउं मेरे पूजा। तुम्ह बिन और न जानौं दूजा।

(2) आचरण की शुद्धता — कबीर की भक्ति भावना में सदाचार पर बल दिया गया है। वे सदाचार को भक्ति का प्रमुख अंग स्वीकारते हैं। आचरण की शुद्धता के लिए व्यक्ति को संपूर्ण विकारों का परित्याग करना होगा। विकारों के जनक हैं — कंचन कामिनी — इनके त्याग से ही सदाचार का मार्ग प्रशस्त होता है। वे कहते हैं कि नारी के कारण ही व्यक्ति भक्ति मुक्ति और ज्ञान में प्रवेश नहीं कर पाता है —

"नारि मसावै तीनि सुख जा नर पासै होय।
भगति मुकति निज ज्ञान में पैसि न सकई कोय।

कबीर ने आचरण की शुद्धता के लिए कुसंग का त्याग करने एवं सत्संग करने पर बल दिया है। कबीर का मत है कि जब तक मन में काम क्रोध, मद, लोभ, मोह, ईर्षा-द्वेष आदि विकार भरे हैं तब तक हृदय में भगवान की भक्ति नहीं आ सकती।

(3) प्रपत्ति भाव — प्रपत्ति का अर्थ है — शरणागति एवं आत्मनिवेदन। कबीर भगवान को सर्वशक्तिमान मानकर उनकी शरण में जाकर अपनी रक्षा की प्रार्थना करते हैं —

कबीर तेरी सरनि आया, राखि लेहु भगवान।

मृत्यु का भय भी ईश्वर की शरण में जाने पर हीं छूट पाता है। यथा –

"भवसागर अपाह जल तामें बोहित राम अधार।
कहैं कबीर हम हरि सरन, तब गोपद खुद विस्तार॥"

④ ईश्वर में विश्वास – कबीर को भगवान की सर्वशक्तिमत्ता में विश्वास है। श्रद्धा और विश्वास भक्ति के अनिवार्य तत्व हैं। कबीर को पूरा विश्वास है कि परमात्मा पूर्ण समर्थ है। वह राई को पर्वत और पर्वत को राई करने की सामर्थ्य रखता है यथा –

"सांई सूं सब होत हैं बन्दे से कछु नांहि।
राई थे परबत करैं, परबत राई मांहि॥"

⑤ वैराग्य भावना – जो भक्ति चाहता है उसे संसार के प्रति विरक्त भाव अपने मन में जगाना आवश्यक है। वैराग्य का मतलब संसार को छोड़कर जंगल में निवास करना नहीं है। संसार में रहते हुए भी मन में संतोष वृत्ति लाना, विषय भोगों के प्रति अनासक्त होना आशा तृष्णा से मुक्त होना हीं वैराग्य है। जब भक्त भगवान की ओर उन्मुख हो जाता है तो सांसारिक विषयों के प्रति विरक्ति स्वतः जाग्रत हो जाती है। कबीर की मान्यता है कि आशा और तृष्णा जन्म-जन्मान्तर तक पीछा करते रहते हैं।

"माया मरी न मन मुआ मारे-मरि गया सरीर।
आसा त्रिस्ना ना मरी सो कहि गए दास कबीर।

(6) माधुर्य भाव की भक्ति – माधुर्य भाव की भक्ति को मधुराभक्ति या प्रेम लक्षणा भक्ति कहा जाता है। भक्त स्वयं को जीवात्मा एवं भगवान को परमात्मा मानकर दाम्पत्य प्रेम की अभिव्यक्ति जहाँ करता है वहाँ मधुरा भक्ति मानी जाती है। कबीर की आत्मा रूपी सुन्दरी बार-बार 'हरि' को अपना प्रियतम मानती हुई कहती है कि हरि के बिना मैं रह नहीं सकती –

"हरि मेरा पीव हरि मेरा पीव।
हरि बिन रहि न सकै मेरा जीव।"

(7) दास्य भाव की भक्ति :– तुलसी की भक्ति जिस प्रकार दास्य भाव की है उसी प्रकार कबीर की भक्ति भावना में भी दास्य भाव दिखाई पड़ता है। वे प्रभु को स्वामी एवं स्वयं को 'दास' सेवक या गुलाम कहते हैं –

(i) मैं गुलाम मोहि बेचि गोसाईं
(ii) जो सुख प्रभु गोविन्द की सेवा, सो सुख राज न लहिौ।

(8) नवधा भक्ति – कबीर के काव्य में नवधा भक्ति के तत्व – श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य, आत्मनिवेदन – भी उपलब्ध होते हैं। यथा –

नाम स्मरण – राम जपौ जिय ऐसे ऐसे ध्रुव प्रह्लाद जप्यौ हरि जैसे।
पाद सेवन – राम चरन मन भाए रे।
अर्चन – ऐसी आरती त्रिभुवन तारै। तेज पुंज तहं प्रान उतारै॥
वन्दन – बन्दे तोहि बंदगी सौं काम। हरि बिन जांनि और हराम।
दास्य – सो सेवक जो लाया सेव। तिन्हीं पाए निरंजन देव।
आत्म निवेदन – "जो है जाका भावता जदि तदि मिलसी आइ।

जाकौं तन मन सौंपिया सो कबहूँ छाँडि न जाई ॥"

सारत: कहा जा सकता है कि कबीर एक सच्चे भक्त थे। ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा एवं विश्वास उनकी भक्ति भावना का प्रमुख तत्व माना जा सकता है। उन्होंने अपनी भक्ति के माध्यम से मनुष्य के भीतर काम क्रोध, मद लोभ, मोह, ईर्ष्या-द्वेष आदि विकार को निकाल फेंकने का कार्य किया है। यह कहा जा सकता है कि कबीरदास का यह योगदान अविस्मरणीय है।